पेरिस
१८ दिसम्बर, २००५

संदेश संख्या – ८२

थकान

हिमालय की गोद में सम्पन्न हुए २००५ के रिट्रीट में, पवित्र एवं प्रभावकारी स्वाध्याय चल रहा था । कार्यक्रम अत्यन्त व्यस्ततापूर्ण था । लेकिन भोजन का प्रबन्ध अत्युत्तम था–बिना पुनरावृत्ति के हर समय नया एवं स्वादि पकवान । वहाँ हिमालय का परिवेश, चारों ओर फैले अपने पवित्र, विशाल एवं गंभीर प्राकृतिक परिदृश्य के साथ स्वर्गतुल्य था । थकान जो मन के विखण्डित क्षेत्रों से निःसृत होती है, के लिए वहाँ कोई अवकाश नहीं था । वहाँ केवल जीवन था, अतः वहाँ निर्मन की स्थिति थी । फिर भी, कुछ क्रियवानों ने थकान की शिकायत की ।

तभी 'थकान' विषय पर प्राकृतिक–झरने की तरह स्वतः स्फूर्त उदगार निकलने लगे और श्रावकों (सुननेवालों) के चित्त में रूपान्तरण होने लगा । बाद में, वहाँ के कुछ क्रियावानों ने सुझाव दिया कि उन उदगारों का सारांश एक संदेश के रुप में वेब–साइट पर होना चाहिए । बुल्गारियावासियों को बहुत–बहुत धन्यवाद जिन्होंने उस घटना का श्रव्य–दृश्य अभिलेखन (विडियो रिकॉर्डिंग) किया था और बाद में उसकी यथासंभव प्रतिलिपि इस संदेश हेतु शिवेन्दु को भेजी गयी ।

रवीन्द्रनाथ टैगोर, भारत के प्रसिद्ध कवि–ऋषि ने एक सुन्दर एवं मधुर गीत में कहा है – ''क्लान्ति आमार खमा करो प्रभु ... '' अर्थात् हे जीवन, हे भगवन, हे सर्वव्यापी चितिशक्ति, 'मैं' अर्थात् मन की इस थकान के लिए क्षमा करो; मन की इस तुच्छता, इस म्लानता, इस निर्धनता, इस निर्जीवता के लिए क्षमा करो।

ऊर्जा जीवन की स्वाभाविक अवस्था है। थकान मन की आत्मसंरक्षी प्रक्रिया है जो कि जीवन का शत्रु है। जीवन की पूर्णता केवल देखकर हो जाती है जबकि मन पूर्णता प्राप्त करना चाहता है – बनकर, लक्ष्य–प्राप्तकर, अंतिमतिथि को पहुँचकर, प्रतिक्रिया द्वारा, पश्चाताप कर, अप्रसन्न होकर, निर्भर होकर, समर्थन करके, भ्रांत होकर । जीवन पूर्णता है । मन केवल विखण्डन है । जीवन आनन्द है । मन थकान है ।

शरीर जो कि सीमित जीवन है, को परिस्थिति विशेष में विश्राम, ताजगी, आराम, गहरी शान्ति, झपकी, निद्रा आदि की आवश्यकता हो सकती है और इससे शरीर स्वयं को स्वतः ही ऊर्जा एवं ताजगी से भर लेता है । यह शरीर किसी परिस्थिति को थकान की स्थिति में वर्गीकृत कर चिन्ता नहीं करता । यह मन ही है जो किसी परिस्थिति को प्रीतिकर, अप्रीतिकर, थकान या किसी अन्य में वर्गीकृत करता है । तब यह किसी भी प्रकार से प्रीतिकर को पकड़े रहना चाहता है और अप्रीतिकर का शत्रु बन जाता है । ऐसा मन शरीर को न करने लगता है, शरीर में बीमारी होने लगती है और परिणामस्वरूप हमलोग बहुत–प्रकार के मनोदैहिक बीमारियों में फँस जाते हैं । इस तरह मन जीवन के शत्रु के रूप में कार्य करने लगता है । ऐसी स्थिति में अनुबंधनवश तुम मनोत्तेजक संगीत और दृश्य के माध्यम से शांति और आराम पाना चाहते हो किन्तु महत्वाकांक्षी मन के सूक्ष्मतर जटिलताओं में फँसते जाते हो । 'मैं' जो कि मन ही है, तुम्हारी प्रत्येक गतिविधि के पीछे सावधानीपूर्वक छिपा रहता है । वस्तुतः इसी कारण 'योग–केन्द्र' अच्छा व्यापार करते हैं । विश्राम की चिन्ता 'मैं' के बोझ को निरन्तरता प्रदान करती है जिसे शरीर (जीवन) को अनावश्यक रूप से ढोना पड़ता है और परिणामस्वरूप मानव सम्बन्ध के प्रत्येक स्तर पर द्वन्द्व और अशांति उत्पन्न होता है । 'योग' का पवित्र नाम लेकर तथा संस्कृत शब्दों के प्रयोग से उत्पन्न मनोरंजन और रोमांच का सहारा लेकर चलाये जा रहे शारीरिक स्वास्थ्य और आत्मसम्मोहक कार्यक्रमों से किसी व्यक्ति को लाभ हो सकता है। किंतु योग का सार चैतन्य की जागृति, समन्वय और अन्तर्दृष्टि है और यह तभी होता है, जब चेतना के अवयवों का साक्षी–भाव में दर्शन किया जाता है; न उन्हें संपोषित किया जाता है और न ही उनसे संघर्ष किया जाता है । यह जागृति तभी होती है, जब शरीरी चेतना का एक हिस्सा अन्य हिस्सों पर नियन्त्रण करने के उद्देश्य से स्वयं को सत्ता–सम्पन्न एवं अन्य हिस्सों से अलग नहीं समझता। किन्तु यह 'सत्ता' अपने चिरस्थायित्व के लिए एक 'व्यक्ति' और उसकी 'आत्मा' की कल्पना करता है और फिर किसी विशिष्ट विश्वास–पद्धति की सहायता से सफलता और मुक्ति की योजना बनाता है । वस्तुतः यह सब करने वाला, क्षुद्र 'मैं' ही है जो कि मिथक है । इसका केवल आभासी अस्तित्व है और यह शरीरी चेतना में मिथ्या विखण्डन मात्र है । इस 'मन–मैं' के ढाँचे में मौलिक परिवर्तन ही योग का सार है और यह तभी होता है जब 'मैं' के पूर्ण प्रयत्न–शैथिल्य द्वारा मन में मौलिक परिवर्तन घटित होता है । तभी परमपवित्र द्वारा वास्तविक कल्याण का प्रारम्भ होता है किन्तु इसका आध्यात्मिक–मंडी के पाखण्डी कल्याणकर्त्ताओं से कोई संबंध नहीं । ''मन और मैं' का ताना–बाना और उसकी कार्य–लिप्तता, सनक और अज्ञानता की गलाघोंटू पकड़ (दबाव) से जीवन को मुक्त कराना ही योग का सार है । यह प्रत्येक व्यक्ति द्वारा सत्य एवं जीवन की समझदारी का पुनः आविष्करण है, जो कि सत्य के बारे में बहु–प्रचारित विचारों के अनुसरण द्वारा नहीं होता ।

हमलोगों की पूरी ऊर्जा अपनी माँ से मिलती है । यह प्राचीन प्रज्ञा है जिसका आधुनिक जीव विज्ञान ने भी अनुमोदन किया है । अतः जब तुम्हें थकान महसूस हो तो केवल अपनी माँ या माँ के अन्य रूपों, यथा–माँ अन्नपूर्णा (एनी–मेरी), माँ राधा (मारिया), माँ सरस्वती (सारा), माँ काली (फातिमा) इत्यादि को याद करो ।

जीवन रूपी नदी की मध्य–धारा में चट्टान की तरह अडिग रहो, मन की थकान में नहीं ।

जय माँ